Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 5 | ISSN : 2582-0095

केनोपनिषद्

डॉ. विनय कुमार पाण्डेय
प्रवक्ता (संस्कृत) +2 उच्च विद्यालय पाथुरिया,
बोकारो, झारखण्ड।

शोध आलेख सार – ईशादि दस अत्यन्त प्रख्यात् उपनिषदों में केनोपनिषद् का नाम दूसरे स्थान पर आता है। इस उपनिषद् में दो प्रकार के भाष्यों का प्रणयन भगत्पाद शंकाराचार्य ने स्वयं किया है। विद्या प्राप्ति के साधनों का वर्णन तथा केनोपनिषद् के फल के वर्णन के साथ–साथ यह उपनिषद् पूर्ण होता है।

मुख्य शब्द – केनोपनिषद्, सामवेदीय तवलकारशाखा, विद्या, शंकाराचार्य।

सामवेदीय तवलकारशाखा के नवें अध्याय को केनोपनिषद् शब्द से अभिहित किया जाता है। ईशादि दस अत्यन्त प्रख्यात् उपनिषदों में केनोपनिषद् का नाम दूसरे स्थान पर आता है। इस उपनिषद् में दो प्रकार के भाष्यों का प्रणयन भगत्पाद शंकाराचार्य ने स्वयं किया है। पदभाष्य और वाक्य भाष्य। पदभाष्य में भगवत्पाद ने उपनिषद् के अर्थ का प्रकाशन उसके पदो ंके अनुसारं किया है, जिससे कि सामान्य पाठक भी इस उपनिषद् के मूलग्राही अर्थ कों आसानी से जान सकें, किन्तु उस पदभाष्य से मुमुक्षु पुरुष का अपेक्षित कल्याण न देखकर आचार्य ने इस उपनिषद् के वाक्यभाष्य का प्रणयन किया। इस भाष्य में उपनिषद् के वाक्यों के अभिप्राय को स्पष्ट किया है। स्थान स्थान पर स्वमत पोषण कों भी उन्होंने उपन्यस्त किया है। फलतः पदभाष्य की अपेक्षा वाक्य भाष्य की गम्भीरता अधिक हो गयी है।

केनोपनिषद् इत्यादि वाक्य से प्रारम्भ होने वाली केनोपनिषद् का प्रतिपाद्य विषय ब्रह्म है। इस उपनिषद् का प्रवचन करने के लिए जैमिनीयोपनिषद् तवल्कारोपनिषद् का नवाँ अध्याय प्रारम्भ होता है। इस अध्याय के पहले के आठ अध्यायो में सम्पूर्ण कर्मों के आश्रय स्वरूप प्राण विज्ञान का तथा अनेक प्रकार के कर्मों का निरूपण किया गया है। इन दोनों विज्ञान तथा कर्म का विकल्प रूप से अनुष्ठान करने पर दक्षिण मार्ग की प्राप्ति तथा पुनः संसारचक्र में आगमन होताा है तथा दोनों का समुच्चय रूप से अनुष्ठान करने पर उत्तरमार्ग देवयान से गमन तथा अनावृत्ति क्रममुक्ति की प्राप्ति होती है। इसके पश्चात् फलाभिसन्धि से रहित होकर ज्ञान तथा कर्म दोनों के समुच्चय का अनुष्ठान करने से जिसके आत्मा का संस्कार हो गया है अर्थात् जिसका अन्तः करण शुद्ध हो गया है। उसके आत्मा के स्वरूप ज्ञान से प्रतिवन्धक चित्त के मल का विनाश

हो जाता है। वह भेदविषयक दोष को जान जाता है। वह जान जाता है कि यह दिखाई देने वाला सम्पूर्ण वाह्य प्रपंच अज्ञान जन्य है। फलतः वह चाहता है कि इस संसार का बीज अर्थात् उपादान कारण अज्ञान विनष्ट हो जाय, एतदर्थ उसमें प्रत्यगात्मा अर्थात् जीवन के स्वरूप को जानने की इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इस जिज्ञासु पुरुष को आत्मा के स्वरूप का तत्वतः ज्ञान कराने के लिए जैमिनीय ब्राह्मण का यह नवा अध्याय केनेषितम् इत्यादि वाक्य से प्रारम्भ होता है।

केनोपनिषद् का प्रारम्भ शिष्य की जिज्ञासा से होता है। शिष्य के सामने प्रश्न है कि इस सम्पूर्ण जगत् का प्रेरक तत्व कौन है? किसके द्वारा प्रेरित होकर ये प्राकृतिक कर्मेन्द्रिया तथा ज्ञानेन्द्रियाँ एवं अन्तःकरण विभिन्न कार्यो को किया करते है।? इस प्रेरक तत्व का स्वरूप क्या है? सम्पूर्ण जगत का नियामक कौन है? देवाधिदेव कौन है? जीवन का लक्ष्य क्या है? ज्ञान के चरमोत्कर्ष की स्थिति क्या है? वह अपने इन समस्त प्रश्नों के साथ आचार्य के समक्ष उपस्थित और आचार्य योग्य और अधिकारी शिष्य के सभी प्रश्नों का समुचित समाधान करते है। प्रमाण और परम्परा के परिपेक्ष्य में शिष्य के समुचित तर्को का समाधान करते हैं।

केनोपनिषद् के चार खण्ड है– दो पद्य में है और दो गद्य में हैं। खण्डानुसार इसकी विषय वस्तु अधोलिखित है–

प्रथमखण्ड– इस खण्ड में सर्वप्रथम शिष्य का तथा इन्द्रियों के प्रेरक तत्व के विषय में प्रश्न करता है। उसके उत्तर में आचार्य आत्मा के सर्व नियामत्व का प्रतिपादन करते है। तत्पश्चात् आत्मा के अज्ञेयत्व तथा अनिर्वचनी महत्व का कथन करते हुए ब्रह्म की अनुपास्यता का कथन करते है। इस खण्ड की चौथी से लेकर आठवीं तक की श्रुतिया आत्मा में ही प्रवृत्त है।

द्वितीय खण्ड – इस खण्ड में आचार्य शिष्य के लिए ब्रह्मज्ञान की अनिर्वचनीयता का प्रतिपादन करते हैं और शिष्य द्वारा अपनी अनुभूति का उल्लेख किया जाता है। तत्पश्चात ` शिष्य तथा आचार्य के संवाद से निवृत्त होकर श्रुति स्वयं ज्ञाता के अज्ञत्व तथा अज्ञ के ज्ञानित्व का प्रतिपादन करती है। विज्ञानावभासो में ब्रह्म को अनुभूति का उल्लेख करती हुई आत्मज्ञान की प्राप्ति को ही जीवन का लक्ष्य बतलाती है।

तृतीय खण्ड–तृतीय खण्ड का प्रारम्भ शम दम की प्राप्ति के लिए किया गया है, क्योंकि करने का यह भाग अभिमान को विनष्ट करने का काम करता है। इस भाग के यक्षो पाख्यान के द्वारा अग्नि वायु तथा इन्द्र के अभिमान को दूर करने की बात बतलायी गयी है। शम आदि की ब्रह्म विद्या की प्राप्ति के साधन है। इस अर्थ का प्रतिपादित करने के लिए उपनिषद् के इस भाग तृतीय खण्ड का एक अन्य उदेश्य सगुणोपासना है। क्योंकि इसके पहले के खण्डों में सगुणोपसाना का खण्डन किया है। **नेदं यदिदमुपासते इत्यादि श्रुत्यांश** के द्वारा सगुण ब्रह्म की उपास्यता का खण्डन किया गया है। खण्डित किये जाने के कारण सगुण ब्रह्म की अनुपास्यता सिद्ध हो जाने पर उस सगुण ब्रह्म की ही अधिदेव तथा अध्यात्म के रूप में उपासाना करनी चहिए। यह इस खण्ड का अन्य उदेश्य है। इस लिए इस खण्ड में कहा गया है कि इत्यादि दैवतम् तद्

वनभिव्युपासितत्यम्।[1] अर्थात् इस सगुण ब्रह्म की वन रूप से उपासना करनी चाहिए,यही उसका अधिदैवत रूप है।

चतुर्थ खण्ड – इस खण्ड के प्रारम्भ में विद्या देवी का इन्द्र के लिए ब्रह्मविषयक उपदेश है। तत्पश्चात् ब्रह्मविषयक अधिदैव आदेश तथा ब्रह्मविषयक अध्यात्मोपासना का वर्णन है। अन्त में विद्या प्राप्ति के साधनों का वर्णन तथा केनोपनिषद् के फल के वर्णन के साथ–साथ यह उपनिषद् पूर्ण होता है।

सन्दर्भ–

1.ईशादि नौ उपनिषद् –गीता प्रेस प्रकाशन

2. उपनिषद् अंक – गीता प्रेस प्रकशन

3. केनोपनिषद् –भारत कोश

4. संस्कृत साहित्य का इतिहास – वाचस्पति गैरोला

5. संस्कृत साहित्य का इतिहास– बी0 डी0 उपाध्याय